भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष-7, अंक-4-5	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी	वार्षिक चन्दा-10.00
बुधवार, 25 मई' 83	मानद सहसम्पादक: डॉ. महेन्द्र दवे-श्री विमल दवे	प्रति अंक : 1.00

कृपावतार स्वामिश्री सहजानंदजी

मूर्ति प्रतिष्ठा की मनीषा

पूर्णपुरुषोत्तम कृपावतार स्वामिश्री सहजानंदजी की आज्ञानुसार अनादि मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंदस्वामी जूनागढ़ गये और वहाँ जाकर मंदिर-निर्माण का कार्य जोरों से आगे बढ़ाया। काफी हद तक कार्य सम्पन्न हुआ। तब ब्रह्मानन्दस्वामी, गुणातीतानन्दस्वामी, आदि के मन में आया कि महाराज जूनागढ़ आने को प्रसन्न हों तो मूर्तियों की प्रतिष्ठा उनके वरद हस्त से करवा लें। जैसा कि आगे देखा है, जूनागढ़ में वातावरण ठीक नहीं था। अतः इस बात को गुप्त रखा गया था किन्तु बात प्रगट हो ही गई !

दीवान रंगीलदास की हठ

जूनागढ़ के नागर अफसर कभी भी जूनागढ़ की पृथ्वी पर स्वामिनारायण का मंदिर नहीं चाहते थे। वे तो चाहते थे किसी भी प्रकार नवाब साहब का मन प्रसन्न किया जाये और मंदिर तुड़वाया जायें ! इन अफसरों ने जब जाना कि मंदिर-निर्माण तो प्रायः समाप्ति पर है और महाराज आने वाले हैं और मूर्तियों की प्रतिष्ठा भी होने वाली है, तब सोचा कि यदि एक बार मूर्तिप्रतिष्ठा हो जायेगी तब मंदिर तुड़वाना मुश्किल हो जायेगा। किसको कहें? दीवान जी भी वहाँ नहीं थे। बड़ोदा गये थे। सबने सोचा कि दीवान रंगीलदासजी को चिट्ठी तो लिखनी चाहिये। सब अफसरों ने निर्णय किया और निम्न आशय की चिट्ठी दीवानजी को लिखीः

''आप तो वहाँ जाकर बैठे हो और स्वामिनारायण का मठ जोरों से चल रहा है। ये साधु खाते भी नहीं है, पीते भी नहीं हैं और लगातार रात-दिन काम कर रहे हैं। अतः थोड़े ही दिनों में इनका मंदिर तैयार हो जायेगा। शीघ्र कुछ उपाय कीजिए, नहीं तो वे लोग मंदिर में एक बार मूर्तिप्रतिष्ठा कर देंगे तो हमारे लिये इसको नष्ट करने का कोई उपाय नहीं रहेगा।''
पत्र पढ़कर रंगीलदास दीवान को अत्यन्त क्रोध आया शीघ्र इन्हों प्रत्युत्तर दियाः

''चिन्ता मत कीजिए। स्वामिनारायण के मंदिर को मैं तुड़वा दूंगा और इसके एक-एक कंकड़ को मैं दूर-दूर फेंक दूँगा और साधुओं को जूनागढ़ की सीमा में घुसने भी नहीं दूँगा।''

इस पत्र को पढ़कर नागर अफसर खुश-खुश हो गये। किन्तु यह पत्र की बात श्री रूपशंकर कीकाणी

ने सुनी। रूपशंकरजी असाधारण हरिभक्त थे, महाराज के आश्रित थे, सत्संगी थे, सत्संग के प्रति उनकी आस्था-आत्मीयता पूर्णरूपेण थी। अतः रूपशंकरजी चिन्तित हो गये और मंदिर में आकर इन्होंने सारी की सारी कहानी योगमूर्ति गोपालानंदस्वामी और मंदिर-निर्माण का कार्य जिनके जिम्मे था उन–ब्रह्मानन्दस्वामी को कही। बात फैल गईः ''रंगीलदास दीवान आ रहा है, रंगीलदास दीवान आ रहा है, मंदिर तुड़वाने के लिये रंगीलदास आ रहा है।''

गोपालानंदस्वामी की आस्था

गोपालानंदस्वामी की तो पूर्णपुरुषोत्तम भगवान स्वामिनारायण में असाधारण आस्था थी। इन्होंने तो प्रेम से कहाः ''यह संसार तो पूर्णपुरुषोत्तम स्वामिनारायण की इच्छानुसार चलता है, अन्य किसी की नहीं। प्रभु की इच्छानुसार ही तो यह मंदिर का निर्माण हो रहा है। फिर रंगीलदास का भय क्यों? इस प्रकार सबको सच्ची सान्त्वना दी, किन्तु ब्रह्मानंदस्वामी को संतोष नहीं हुआ। मंदिर के प्रति ममता थी, अतः भय था। महाराज के लीला अलौकिक है। यह तो शिक्षा थीः ''मंदिर का निर्माण कीजिए किन्तु ममत्व नहीं रखिये, भय नष्ट हो जायेगा।''

दूसरे दिन गोपालानन्दस्वामी पूजा कर रहे थे। ठाकुरजी की मूर्ति पर तुलसी के फूल (मांजर) चढ़ा रहे थे। उस समय पास में बैठे हुए ब्रह्मानन्दस्वामी को कहाः ''स्वामी ! यूं ही मंदिर के शिखर चढ़ जायेंगे।'' ब्रह्मानन्दस्वामी ने कहाः ''आप तो मजाक कर रहे हो, किन्तु रंगीलदास शिखर तक मंदिर कैसे बनने देगा? वह तो मंदिर का जितना निर्माण हुआ है इसको भी तोड़ने के लिए तत्पर है। कुछ उपाय सोचिये। रूपशंकरजी उदास है, संत उदास है, सब कोई उदास है।

उस समय गुणातीतानंदस्वामी गोपालानंदस्वामी के पास ही बैठे थे। ब्रह्मानन्द की उदासी देख कर गोपालानन्दस्वामी ने अब स्पष्ट शब्दों में कहाः

''स्वामी ! चिन्ता मत कीजिये। हम तो श्रीजी के आश्रित हैं हमें क्यों चिन्ता ! श्रीजी की शक्ति के आगे रंगीलदास जैसा तुच्छ जीव क्या कर सकता है?'' ऐसा कहकर अपनी बगल का एक बाल तोड़ा और कहाः ''यह तेरा रंगीलदास ! ब्रह्मानन्द सहित सारी संतमंडली प्रसन्न हो गई। वास्तव में यदि हम परम कृपानिधान पूर्णपुरुषोत्तम को प्रेम करें और इनके प्रति हमारी अटूट, अखण्ड श्रद्धा हो तो हमें भी गोपालानंदस्वामी जैसी निर्भयता प्राप्त होगी।

महाराज की मूर्ति मेरे हृदय में विराजमान है

ऐसी श्रद्धा गोपालानंदस्वामी के शिष्य बालमुकुंदानन्दस्वामी को भी थी। उस समय बालमुकुंदानन्दस्वामी ध्यान में बैठे थे। जब ध्यान से जागृत हुए तब एक संत ने कहाः ''रंगीलदास आ रहा है और सब व्यग्र हैं। आपको तो जैसे कोई चिन्ता ही नहीं है ! प्रेम से ध्यानमग्न हो सकते हो !'' गोपालानन्दस्वामी की कृपा से बालमुकुन्दानन्दस्वामी को स्थितप्रज्ञता प्राप्त हो चुकी थी। अतः इन्होंने अत्यंत शान्ति से कहाः ''मैं क्यों विचलित होऊं? महाराज की मूर्ति निरंतर मेरे हृदय में विराजमान है।'' बालमुकुन्दानन्दस्वामी की यह बात सुनकर प्रश्नकर्ता साधु का स्नेह बढ़ गया और उसके हृदय में भी महाराज दृढ़ासीन हो गये ! वाह महाराज !!

रंगीलदास की दुर्गति

दो-तीन दिन के बाद समाचार प्राप्त हुआः ''रंगीलदास दीवान बड़ोदरा से जूनागढ़ आने को चल चुका है।'' अन्य सब के हृदय भयभीत थे, किन्तु मंदिर में गोपालानन्दस्वामी के धीर और शान्त वचनों के कारण सबकों परम शान्ति थी। 'महाराज ही कर्ता-हर्ता है'–यह समझ थी। सब उत्सुक थेः

''महाराज अब क्या करेंगे?'' रंगीलदास का घोड़ा दौड़ता हुआ चला आ रहा था। जूनागढ़ के पास बड़ाल गांव भी पीछे रह गया। 'अभी पहुँच जायेंगे जूनागढ़'–किन्तु योगमूर्ति गोपालानन्दस्वामी का संकल्प था–रंगीलदास को जूनागढ़ पहुँचने ही न देने का ! रास्ते में एक तीतर (पक्षी) निकला। उसको देखकर घोड़ा घबरा गया। चारों पांवों से उछला और रंगीलदास को भूमि पर पटक दिया। उस रौद्रमूर्ति दीवान के हाथ में बरछी (शस्त्र) थी। उसकी ही बरछी की नोक-गिरते-गिरते उसके पेट में चली गई और वहीं शीघ्र उसके प्राणों का अंत हो गया। दीवान रंगीलदास के इस आकस्मिक निधन का वृत्तान्त आग के समान फैल गया। जूनाागढ़ में नवाब साहब ने भी सुना और दीवान के स्वागत के लिये जो सेवकगण जा रहा था उसको रोक लिया। कानून के अनुसार जनाजा नगर में नहीं आ सकता है, अतः आज्ञा करी कि शव को सीधे दामोदर कुंड ही ले जाइये। वहीं शव का अग्निसंस्कार हुआ। बेचारा रंगीलदास ! अपने नगर, अपने घर तक भी नहीं पहुंच पाया !!

इधर रूपशंकरजी को यह समाचार मिला। सीधे मंदिर पहुँच गये और ब्रह्मानन्दस्वामी को समाचार दिया। ब्रह्मानंदस्वामी भाव-विभोर हो गये। वाह महाराज ! अद्‌भुत है आपका रक्षाकवच ! अद्‌भुत है आपकी लीला ! ब्रह्मानन्दस्वामी शीघ्र गोपालानन्द स्वामी के पास गये। वहां गुणातीतानन्दस्वामी भी बैठे थे। ब्रह्मानन्दस्वामी ने सारा वृत्तान्त सुनाया और कहाः ''दीवान तो गया।'' सुनकर गुणातीतानन्द स्वामी तो कुछ बोले नहीं किन्तु गोपालानन्दस्वामी ने कहाः ''बड़ोदा से वह जब निकला तब से दीवान को हम तो मृत ही जानते थे।''

हरि करे सो होय

यह प्रसंग भी एक शिक्षारूप है। मनुष्य सोचता है–''मैं करता हूँ, सब कुछ करने की मेरे में शक्ति है।'' किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। मनुष्य के संकल्प का क्या महत्व ! मनुष्य की शक्ति कितनी परिमित ! प्रतिक्षण स्मृति में रखना चाहियेः ''नाऽहं कर्ता, हरिःकर्ता।'' मैं कुछ करने में अशक्त हूँ। जो कुछ भी होता है, वह परमात्मा के संकल्प से ही, परमात्मा की शक्ति से ही होता है। सर पर मौत की तलवार लटक रही हो इसको देखी अनदेखी कर मनुष्य खामुंखा अहम् से पीड़ित रहता है। परमात्मा की इच्छा बिना, स्मरण किये बिना कुछ भी आरंभ कीजिये, अधूरा ही रह जायेगा। 'हरि करे सो होय।' परमात्म बुद्धि वाला सत्संगी यह ठीक जानता है और भगवान एवं भगवान के संत का आश्रय लेता है। केवल द्वेष भावना वाले और आसुरी बुद्धियुक्त ही अपने संकल्प को महत्त्व देते हैं, अपनी शक्ति पर गर्विष्ठ होते हैं। परिणाम ! तो देख ही लिया रंगीलदास जैसा ही होता है। अस्तु।

–क्रमशः

.....और श्रीजी महाराज ने कहा—

5. इस सत्संग में जो विवेकी है वह तो दिनोंदिन अपने अवगुणों को देखता है और भगवान तथा भगवान के भक्तों में गुणों को देखता है। भगवान एवं साधु उसके हित के लिये जो कठोर वचन कहते हैं उन्हें अपने लिये हितकारी मानता है और उनसे (वचनों से) बुरा मानकर दुःखी नहीं होता। वह तो दिन प्रतिदिन सत्संग में महानता को प्राप्त करता है।

Regd. No. D (DN) 655

जो अविवेकी है वह तो ज्यों-ज्यों सत्संग करता है और सत्संग की बातें सुनता है त्यों-त्यों अपने में गुण देखता है और भगवान एवं संत जब उसके किन्हीं दोषों पर बात करते हैं तो वह अभिमानवश होकर उनको विपरीत ले लेता है और उनसे बुरा मानकर साधु में ही दोष देखने लगता है। फलस्वरूप वह दिन-प्रति दिन हल्का होकर सत्संग में प्रतिष्ठाहीन हो जाता है।

इसलिये अपने गुणों का मान त्याग करके वीरता से (दृढ़ता से) जो भगवान एवं उनके संत में विश्वास रखता है उसका अविवेक टल जाता है और सत्संग में महानता को प्राप्त करता है।

गढ़डा प्रथम प्रकरण-6
शुक्रवार, 25 नवं. 1819

स्वामी की बातें

21. हमें तो भगवान की जरूरत नहीं है, किन्तु भगवान सामने से आकर जबरदस्ती हमें चिपके हैं।

महाराज कहते थे—जबकि भूत भी पिण्ड नहीं छोड़ता है, तो हम कैसे छोड़ेंगे? प्र. 1-76

22. भगवान जीव के गुनाह को नहीं देखते हैं। जीव जब भगवान की स्तुति करके प्रार्थना करता है कि 'हे भगवन् ! मैं गुनाहगार हूँ'—तब उसके गुनाह को भगवान माफ कर देते हैं।

प्र. : 1-77

23. चिंतामणि सुन्दर नहीं होती है; इसी प्रकार भगवान और साधु भी मनुष्य जैसे ही होते हैं, किन्तु वे दिव्य हैं और कल्याणकारक हैं और मनुष्य देह तो चिंतामणि है। प्र. : 1-87

व्रतोत्सवसूची

1.	दि. 5.6.83	शनिवार	ब्र.स्व. गुरुहरि योगीजी महाराज और प्र.ब्र.स्व. प.पू. काकाजी महाराज के प्राकट्यदिन एवं प.पू. काकाजी महाराज के विदेश गमन निमित्त हरिधाम सोखड़ा में समारोह
2.	दि. 7.6.83	मंगलवार	अपरा, एकादशी, व्रत
3.	दि. 8.6.83	बुधवार	ब्र.स्व. गुरुहरि योगीजी महाराज का प्राकट्यदिन
4.	दि. 12.6.83	रविवार	प.पू.प्र.ब्र.स्व. काकाजी महाराज की जन्मजयंती, लंदन में समारोह।
5.	दि. 19.6.83	रविवार	नौमी, श्री हरिजयंती
6.	दि. 21.6.83	मंगलवार	भीम एकादशी, व्रत

Published by Sadhu Mukundjivandas for Yogi Divine Society,
A 103, Ashokvihar-III, Delhi-110 052. India, Tel. 7128838
Printed at **Thakkar Printing Press,** 2588, Basti Punjabian, Subzi Mandi, Delhi-110 007